निष्कर्ष एवं सुझाव

निष्कर्ष एवं सुझाव

१९३९ ई० का द्वितीय विश्व युद्ध राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष के लिये नयी ऊर्जा लेकर आया था। एक ओर फासिस्ट शक्तियाँ जर्मनी-इटली थी तो दूसरी ओर इंग्लैंड जैसी साम्राज्यवादी शक्ति थी। ब्रिटेन ने वैश्विक जनमत जुटाने के लिहाज से युद्ध में अपनी भागीदारी को लोकतंत्र बनाम फासीवाद का आवरण ले युद्ध में भाग लेने को न्याय सम्मत ठहरा रहा था। इसी आधार पर उसने भारत, भारतीय नेताओं को विश्वास में लिये बिना युद्ध में झोंक दिया था - भारत का जन-धन ब्रिटेन का सम्बल बने थे। गांधी जी सहित कांग्रेस पार्टी फासिस्ट विरोधी धारणा और नैतिकता के तकाजे पर युद्ध में फँसी ब्रिटिश सरकार को तंग करना नहीं चाहती थी पर वह सरकार से 'स्वशासन' का स्पष्ट आश्वासन भी चाहती थी। इस बिन्दु पर सरकार पर दबाव बनाने के लिये गांधी जी राजनैतिक कार्यक्रम के रूप में 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' का ताना-बाना तैयार करने में लगे थे और राजनैतिक सरगर्मियाँ वेग में बढ़ती जा रही थीं। ऐसे में हरिजन-उद्धार आन्दोलन स्वतंत्रता आन्दोलन की समानांतर धारा से कट गया। तथापि १९३७ के आम चुनावों में प्रदेशों में बनी कांग्रेस की सरकारों ने हरिजनों, दलितों की शैक्षिक स्थिति और जीवन स्तर सुधारने तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के विशेष सरकारी प्रयास किये। इसी के तहत हरिजनों के मंदिर प्रवेश को जो १९३२ ई० में स्थापित 'हरिजन सेवक संघ' की कार्यसूची में था, भी अमली जामा दिया गया। तथापि १९३७ के आम चुनावों में प्रदेशों में बनी कांग्रेस की सरकारों ने 'बम्बई हरिजन टेम्पुल वर्शिप एकट' अर्थात अयोग्यता निवारक कानून लागू किया जिसके अनुसार मंदिरों के न्यासियों को मंदिरों में हरिजनों को प्रवेश देने की अनुमति प्रदान की गयी थी भले ही मंदिर के नियम-उपनियम उनके लिये निषिद्धकारी हों। ज्ञातव्य है कि कांग्रेस सरकार बन जाने के बाद ही ऐसे हरिजनोद्धार आन्दोलन को विकसित होने मे बड़ी मदद मिली- सरकारी अनुदान से, हरिजनों के विद्यालय, छात्रवृत्तियां,

चिकित्सालय, स्वास्थ्यवर्द्धक वातावरण, पीने के पानी की व्यवस्था, नौकरी के अवसर आदि से उनके सामाजिक स्तरीकरण में सुधार हुआ। यहाँ कहना होगा कि कांग्रेस सरकार द्वारा हरिजनों के भौतिक प्रगति में आर्थिक सहयोग से हरिजनों में आत्मोन्नयन की चेतना फैलने लगी फिर इससे हिन्दुओं के विरोध का व्यास भी सिकुड़ने लगा। जो हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह, अन्तर्जातीय भोज या फिर सामाजिक मेल-जोल के अवसर से बिदकते थे जिससे हरिजनों, दलितों और सवर्ण हिन्दुओं में दूरी बढ़ती थी, फिलहाल ऐसे कार्यक्रम के लागू होने पर 'हृदय परिवर्तन' के सूत्र को अपनाया गया।

हरिजनोद्धार आन्दोलन को ग्रामीण अंचलों तक प्रसारित करने हेतु हरिजन सेवक संघ की पूरे देश में १८४ शाखायें खोली गई। ऐसी प्रत्येक इकाई पर लगभग रु० ३०००/- सालाना खर्च आता था। भारत व्यापी संघ के संगठनात्मक ढाँचे पर लगभग ६ लाख रु० सालाना खर्च आता था। इस प्रकार संघ ने इन इकाइयों के माध्यम से हरिजनों में जागृति लाने का उल्लेखनीय प्रयास किया। गांधी जी इन सबके पीछे प्रेरणा श्रोत थे। उन्होंने हरिजन सेवक संघ के लिये अपनी राजनीतिक व्यस्तता के बावजूद आर्थिक संसाधन जुटाने, कार्यक्रम निर्धारित करने और बिना जातीय कलह के उनका पथ प्रशस्त करने हेतु देशव्यापी दौरा किया। 'भारत छोड़ो आन्दोलन' की पूर्व संध्या तक उनकी इस हेतु यात्रा हुई थी। वे अधिकतर पद यात्रा करते थे। इस ९ माह की यात्रा में उन्होंने लगभग ८ लाख रु० की धनराशि 'हरिजन' सेवक संघ' को उपलब्ध करायी थी।

तथापि हरिजन नेताओं को शिकायत थी कि 'संघ' की स्थापना के लगभग एक दशक में दलितों के कल्याण पर निर्धारित धनराशि ६० लाख रु० का मात्र २८ लाख रुपया ही खर्च किया गया इसमें सवर्ण हिन्दुओं ने अपेक्षित अंशदान नहीं किया जबकि 'तिलक स्वराज्य कोष' के लिए इन्होंने एक करोड़ रुपये का चंदा वसूल किया। सचमुच हरिजनों, दलितों और अछूतों की लगभग ५ करोड़ की आबादी पर उपलब्ध धनराशि का खर्च उनके सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को पूरा करने के लिये अपर्याप्त सिद्ध हो रहा था। हरिजनों का सवर्ण हिन्दुओं के प्रति असन्तोष अस्वाभाविक नहीं था। इसे वे अपने

प्रति सवर्णो के ईर्ष्या-द्वेष भाव का प्रमाण मानकर अलगाववादी मनोवृत्ति का प्रकाशन कर रहे थे। इसकी पुष्टि इस बात से हुयी, जब अक्टूबर १९४४ में हरिजन सेवक संघ के आठ सदस्यों में तीन हरिजनों ने केन्द्रीय समिति से त्यागपत्र दे दिया। इसमें डॉक्टर अम्बेडकर, एम० सी० राजा और राय बहादुर श्रीनिवासन थे। इसके बाद अछूतों के प्रतिनिधियों को परिषद में पुनः सम्मिलित करने का कोई प्रयास नहीं हुआ।

ऊपर के वर्णन से यह देखा जा सकता है कि गहराते राजनीतिक व्यस्तताओं के बीच गांधीं जी ने अछूतों को शेष हिन्दू समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के अपने प्रयास को, अभियान को जारी रखा। वस्तुतः अछूतोद्धार गांधी जी के लिये स्वतंत्रता आन्दोलन का ही एक प्रमुख अंग था, जो उनसे कभी तिरोहित नहीं हुआ। तथापि परिस्थितियों ने हरिजनोंद्धार आन्दोलन में गांधी जी की सक्रियता को सील कर दिया। यह वर्ष था १९४२ का। राजनीतिक सरगर्मी से उठ रही अपूर्व उत्ताल तरंगों ने भारतीय समाज के हर वर्ग को स्वाधीनता संघर्ष में लामबन्द होने का अवसर दिया। द्वितीय विश्वयुद्ध में इस वर्ष तक जहाँ नाजी जर्मनी यूरोप में अंग्रेजों की शक्ति तोड़ने में सफलता प्राप्त कर रही थी, वहीं पूर्व में एशियाई शक्ति जापान भी ब्रिटिश उपनिवेशों स्याम, वर्मा, अंडमान, निकोबार से ब्रिटिश राज को नेस्तनाबूद करता जा रहा था। इसमें नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने 'आजाद हिन्द फौज' की कमान सम्भालकर भारत की पूर्वी सीमा पर दस्तक देने लगे थे। ऐसे में कांग्रेस पार्टी, स्वयं गांधी जी जो कभी बिपत्ति में फसी ब्रिटिश सरकार को तंग न करने की मानसिकता में थे, अब नवीन परिस्थतियों का लाभ उठाने का मनोविज्ञान बना चुके थे। फलस्वरूप १४ जुलाई १९४२ ई० को 'अंग्रेजों ! भारत छोड़ो आन्दोलन' का क्षेप्यास्त्र 'वर्धा' से प्रक्षेपित किया। ८ अगस्त १९४२ को कांग्रेस कार्य समिति की बैठक बम्बई में हुई जिसमें गांधी जी ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसे उसने अनुमोदित कर दिया। गांधी जी ने यहीं जनता के नाम 'करो या मरो' का ऐतिहासिक संदेश दिया जिसका अभिप्राय था कि जनता को अहिंसक होते हुये आन्दोलन में करो या मरो भाव से भाग लेना था। परन्तु ब्रिटिश सरकार सतर्क थी । ९ अगस्त की भोर में गांधी जी सहित

कार्यसमिति के सारे नेता गिरफ्तार कर विभिन्न जेलो या स्थानों में नजरबन्द कर दिये गये। नेताओं के अभाव में जनता करो या मरो की अपने आप व्याख्या कर आगे के कुछ महीनों तक आन्दोलन को स्वतंत्रता संघर्ष में रूपायित किया।

यहाँ उल्लेख होगा कि गांधी जी और कांग्रेस के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' से सम्बन्धित विचार 'हरिजन' समाचार पत्र में बराबर प्रकाशित हो रहा था। 'हरिजन' भारत का राष्ट्रवाद का मुख्यक, राष्ट्रवाणी बन गया था। इससे 'हरिजन' शब्द-भाव ने राष्ट्रीय जीवन में अनन्य लोकप्रियता अर्जित की। यह कहना गलत नही होगा कि इससे जनता में हरिजनोद्धार, दलितोद्धार के लिये सीमित ही सही मनोवैज्ञानिक प्रभाव छोड़ा होगा।

प्रसंगेतर नही होगा कि कांग्रेस का ही एक प्रकल्प 'हरिजन सेवक संघ' को मानकर जो शायद गलत भी नही था, सरकार ने इसके कार्यकर्ताओं, पदाधिकारियों की भी व्यापक गिरफ्तारी की। पर इससे भी महत्वपूर्ण है कि सन् १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में हरिजनों की भी उल्लेखनीय भागीदारी थी। यद्यपि डॉ० अम्बेडकर इस आन्दोलन के विरोधी थे या कि जैसा अरूण शौरी के नवप्रकाशित ग्रन्थ 'वर्शिपिंग आफ फाल्स गाड्स' से ज्ञात होता है, वे ब्रिटिश सरकार के प्रति स्वामीभक्त इस आन्दोलन के दरमियान तक बने रहे और उनके कारण 'महार' जाति ने भी वांछित सहभागिता नहीं निभाई पर हरिजनों के दूसरे समुदाय ने सवर्ण हिन्दुओं के साथ आन्दोलन के विविध रूपों अहिंसात्मक तोड़ फोड़ में अपनी गणनीय उपस्थिति दर्ज करायी। इस आन्दोलन का एक महत्त परिणाम यह हुआ कि जेल में बन्दी सवर्ण हिन्दुओं के साथ दलितों, हरिजनों में समानता भाई चारा का बड़ा अवसर आया। साथ-साथ रहने खाने-पीने, सोने या फिर सामूहिक भजन करने के शताब्दियों के भेदभाव ऊच्च-नीच, स्पृश्यास्पृश्य का मूक विरोधान हुआ। कहना होगा कि नेताओं, कार्यकर्ताओं या आन्दोलनकारियों के दो ढाई वर्षो के कारावास नजरबन्दी ने 'हरिजन सेवक संघ' या फिर अछूतोद्धार के दूसरे बन्द गतिविधियों की क्षतिपूर्ति कर दी और यह सुअवसर गांधी जी की देन थी।

इस बिन्दु पर अपनी टिप्पणी करते हुए इतिहासकार आर०सी० मजूमदार ने अपने ग्रन्थ 'फ्रीडम फार स्ट्रगल' पृ० १०११ पर लिखा है :- "इस सत्य को नकारा नही जा सकता कि सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्व जिसने दलितो की दशा सुधारने में योगदान किया वह नई चेतना थी जो अवसर की देन थी, जिसे विश्व युद्धो ने पैदा किया था .. .. . . महान राष्ट्रीय संग्राम जहॉ सभी वर्ग ने महान और प्रेरणादायी उद्देश्य के लिये आपस में मिल जुल कर संघर्ष किया (आन्दोलनरत थे), इसने सभी वर्गो-विश्वासो को निकट शारीरिक सम्पर्क में आने का मौका दिया जिसने सैद्धन्तिक और व्यावहारिक दोनो प्रकार के अस्पृश्यता के विनाश के लिये मंत्र का काम किया।

१९४२ से लेकर १९७४ का अर्द्ध दशक भारत के राजनीतिक कैनवास पर बहुत रोमांचकारी घटनाओं को लेकर आता है। ब्रिटेन सहित मित्र राष्ट्रो की विजय, जनतंत्र-मानवाधिकार का संदेशवाहक अटलांटिक मार्टर की घोषणा भारत की स्वतंत्रता के लिये विश्व जनमत का ब्रिटिश सरकार पर दबाव, स्वतंत्रता प्रदायी मिशनों, सम्मेलनो की पीठिका बनाते है। एक ओर जहॉ भारतीय जनता की सबसे बड़ी आकांक्षा और मांग स्वाधीनता निर्णायक दौर में चल रही है वही दूसरी ओर मुस्लिम लीग के द्विराष्ट्रवादी उत्तेजक गतिविधियों से भारत की एकता -अखंडता 'डाइलेसिस' पर चढी है। लीग से प्रोत्साहित हरिजन नेताओं ने भी हरिजनों के लिये पृथक राज्य की मांग करनी शुरू कर दी। गांधी जी की सूझ-बूझ और कानून में उनके लिये पर्याप्त संरक्षण की सुविधा से हरिजनों का पृथकतावाद ठंढे बस्ते में आ गया। ये दिन थे साम्प्रदायिक तनाव के, दंगो के या फिर लीग के प्रत्यक्ष कार्यवाही के, गांधी जी सन् १९४४ के अंत में जेल से छूटने के बाद सक्रिय राजनीति से थोड़ी विरक्ति दिखाई पर अछूतोद्धार के लिये या फिर हरिजन हित के लिये उन्होंने अपने अवरूद्ध प्रयास को पुनः बुलन्द किया। इसी अनन्तर १९४६ ई० में केन्द्र में अंतरिम सरकार बनी प्रान्तों में भी कांग्रेसी सरकारो के पुनर्जन्म से अस्पृश्यता निवारक, दलित हित संवर्द्धक प्रावधानो को संवैधानिक लिबास मिला। प्रान्तीय सरकारों ने हरिजनों-दलितों को सवर्ण हिन्दुओं के मुकाबले समानाधिकार का संविधान बनाया।

अस्पृश्यता-निवारण की दिशा में यह अत्यधिक ठोस कदम था अब हरिजन दलित वर्ग में होने के कारण वे हिन्दुओं के सार्वजनिक स्थानो, समारोहो, पवित्र स्थानों में प्रवेश के भागीदारी के अधिकारी हो गये। अनेक प्रान्तो में जैसा कि बम्बई में सरकार ने हरिजन कल्याण परामर्श समिति के तर्ज पर विभाग खोले गये। उधर गांधी जी ने मजहबी, साम्प्रदायिक हिंसा के शमन के लिये शांति यात्राये की। वे बंगाल, आसाम, मद्रास की यात्रा किये जिससे हरिजन समस्या लोगो के दृष्टिपथ, विचारपथ में पुनः सजीव हो उठी और इसने 'हरिजन' कार्यकर्ताओं के उत्साह-वर्द्धक, मनोबल उत्थान में काफी मद्द मिली।

इसके बाद १५ अगस्त १९४७ ई० को भारतीयो का बहु प्रतीक्षित, चिर संघर्षित तथा सर्व आकांक्षित स्वातंत्र्य सूर्य का उदय इस महाद्वीप पर हुआ। यह स्वतंत्रता पूरी तरह लहुलुहान थी। देश विभाजन के फलस्वरूव भारत के भुज प्रदेश उससे अलग कर दिये गये थे। इसने करोड़ो लोगो को विस्थापित कर दिया - जन-धन-परिजनो के विछोह विनाश ने शताब्दी की सबसे बड़ी त्रासदी पैदा कर दी थी। हिन्दुओं को हिन्दु होने की सजा मिल रही थी। ऐसे में हरिजन या फिर दलित कैसे बचतें। आखिर हिन्दु वे भी थे। अतः लाखों हरिजनो का नवनिर्मित पाकिस्तान से विस्थापन, पलायन हिन्दुस्तान में हुआ। भारत सरकार और समाज को इतिहास में अभूतपूर्व 'शरणार्थी' समस्या का सामना करना पड़ा। और भी कठिन हरिजनों के पुनर्वास की समस्या थी। अभी सवर्ण हिन्दू बस्ती उन्हें बसाने की मानसिकता पूरी तरह बना नहीं पायी थी। तथापि 'हरिजन सेवक संघ' ने अपने कार्यकर्ताओ के माध्यम से हरिजनों की सहायता में एड़ी चोटी का पसीना एक कर दिया। संघ ने निरीह असहाय लोगो के पुनर्वास की ओर विशेष ध्यान केन्द्रित किया। रामेश्वरी नेहरू को, जो हरिजन सेवक संघ की उपाध्यक्षा थी अब 'विस्थापित हरिजन पुनर्वास परिषद ' (डिसप्लेस्ड हरिजन्स रीहैविलिटेशल बोर्ड) का सरकार ने अध्यक्ष बनाया। श्रीमती नेहरू ने भारी कठिनाईयों के बीच हरिजनों को पुनर्वास देने में अतीव तत्परता दिखायी तथापि वांछित फल मिल पाता कि इसी अनन्तर हरिजनों-दलितों के मसीहा महात्मा गांधी को इतिहास के क्रूर हाथो ने छीन लिया। इससे भी अधिक जले पर नमक छिड़कने के

समान हरिजनोत्थान के, हरिजन सेवक संघ के दूसरे नेताओं, मार्गदर्शको, कर्णधारो की भी एक ही क्रम में मृत्यु हो गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के दो ही साल में गांधी जी का वियोग न सह पाने के कारण ठक्कर वापा, काका साहबवर्णे, के०पी०दाते, के० सदाशिवम, रामेश्वरी नेहरू, परीक्षित लाल मजूमदार आदि का निधन हो गया। संतोष की बात यह थी कि 'हरिजन सेवक संघ' भारत की एक ठोस नींव वाली संस्था थी तथा उसने दलितोद्धार के बाधित श्रृंखला को आगे बढाना जारी रखा।

महात्मा गांधी ३० जनवरी १९४८ को अपनी शहादत से नेपथ्य में अवश्य चले गये थे पर हरिजनों दलितों के प्रति उनकी अकलुष संवेदना उनकी शुभ चिन्ता भारत के राष्ट्रीय जीवन में आत्मवत विद्यमान है। १९५० ई० में लागू संविधान में ही न केवल इसका प्रतिबिम्ब है अपितु भावी संविधान संशोधन तक हरिजन कल्याण का फलक फैलता दिखायी पड़ता है। भारतीय संविधान में हरिजनों दलितों को शेष सवर्ण हिन्दुओं की तरह सामाजिक आर्थिक अधिकार का प्रावधान है, उनकी शिक्षा, नौकरी के लिये आरक्षण प्रणाली की व्यवस्था है, विधान सभाओं और लोकसभा में हरिजनों का प्रतिनिधित्व आरक्षित है, प्रादेशिक सरकारों में हरिजन कल्याण मंत्रालय काम करता है और हर जिले मे हरिजन कल्याण विभाग प्रशासकीय दायित्व संभालता है। सारांशत: हरिजनों की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक रूढिगत अयोग्यताओं पर संविधान के हथियार से विजय प्राप्त कर लिया गया है। अस्पृश्यता पर कानूनी पाबन्दी पहले से ही लागू है लेकिन हरिजनों के सामाजिक स्तरीकरण में व्यावहारिक पक्ष अधिक उज्जवल है। रेल बस में सहयात्रा, होटल, जलपान गृहों मे सहभोज, विद्यालयों में सह पठन पाठन कार्यालयों कारखानों मे सहकार आदि ने सामाजिक समरसता में मौन क्रांति की है। तथापि आर्थिक क्षेत्र में शताब्दियो से चली आ रही गैर बराबरी को दूर करने की दिशा में अभी बहुत कुछ करना बाकी है। कहना होगा कि जहॉ जहॉ दलितोद्धार, हरिजन कल्याण की आवाज है, मांग है वहॉ गांधी जी नि:सन्देह मूर्तिमन्त है।

फिर भी, चित्र का दूसरा पहलू भी होता है जो आदर्शनीय होने पर भी अस्तित्व रखता है। गांधी जी की मंशा के विपरीत स्वातंत्र्योत्तर भारत में हरिजन कल्याण का सतत् राजनीतिकरण होता जा रहा है। सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि हरिजन कल्याण ने एक उद्योग का रूप ले लिया है और इसमें भी हरिजन पूँजीपतियों, का नव हरिजन सामन्तों का टापू उभरता-विकसित होता दिखायी पड़ता है। गांधी जी चाहते थे कि हरिजन आत्मोत्थान के स्वयं वाहक बने, आरक्षण, विशिष्ट अवसर एक अस्थायी, अल्पकालिक उपचार होना चाहिये क्योंकि इसमे हीनता की ग्रन्थि समाहित है। हरिजनों, पिछड़ो, को गैर बराबरी ऊच्च नीच की किलेबन्दी को स्वयं तोड़ना होगा और इसके लिये मानसिकता विकसित करनी होगी। हरिजनों, दलितों को अति सचेत, सतर्क रहना होगा कि कोई न्यस्त स्वार्थी तत्व उन्हें 'इस्तेमाल' की एक चीज बनाकर न छोड़ दे।